असक्तमाराधयतो यथायथं विभज्य भक्या समपक्षपातया।

गुणानुरागादिव सख्यमीयिवान् न बाधतेऽस्य त्रिगण: परस्परम्॥११॥

अन्वय-

यथायथं विभज्य समपक्षपातया भक्या असक्तम् आराधयत: अस्य त्रिगण: गुणानुरागात् सख्यम् ईयिवान् इव परस्परम् न बाधते ॥११॥

अर्थ –

यथोचित विभाग कर, किसी के साथ कोई विशेष पक्षपात न करके वह दुर्योधन अनासक्त भाव से धर्म, अर्थ और काम का सेवन करता है, जिससे ये तीनों ही उसके (स्पृहणीय) गुणों से अनुरक्त होकर उसके मित्र-से बन गये हैं और परस्पर उनका विरोध भाव नहीं रह गया है ॥११॥

टिप्पणी-

तात्पर्य यह है कि दुर्योधन धर्म, अर्थ, काम का ठीक-ठीक विभाग कर प्रत्येक का इस प्रकार आचरण करता है कि किसी में आसक्त नहीं मालूम पडता । सब का समय नियत है, किसी से कोई पक्षपात नहीं है। उसके गुणों पर ये तीनों ही रीझ उठे है। यद्यपि ये परस्पर विरोधी है, तथापि उसके लिए इनमें मित्रता हो गई है और प्रतिदिन इनकी वृद्धि हो रही है। यहाँ वाच्योत्प्रेक्षा है।

निरत्ययं साम न दानवर्जितं न भूरिदानं विरहय्य सत्क्रियाम्।

प्रवर्तते तस्य विशेषशालिनी गुणानुरोधेन विना न सत्क्रिया ॥१२॥

अन्वय-

तस्य निरत्ययं साम न दानवर्जितं न प्रवर्तते। भूरिदानं सत्क्रियाम् विरहय्य न (प्रवर्तते) । विशेषशालिनी सत्क्रिया गुणानुरोधेन विना न (प्रवर्तते) ॥१२॥

अर्थ-

उस दुर्योधन की निष्कपट साम नीति दान के बिना नही प्रवर्तित होती तथा प्रचुर दान सत्कार के बिना नहीं होता और उसका अतिशय सत्कार भी बिना विशेष गुण के नहीं होता। (अर्थात् यह अतिशय सत्कार भी विशेष गुणी तथा योग्य व्यक्तियो का ही करता है।) ॥१२॥

टिप्पणी-

राजनीति में चार नीति कही गई हैं। साम, दाम, दण्ड और भेद । दुर्योधन इन चारों उपायों को बड़ी निपुणता से प्रयोग करता है। अपने से बड़े शत्रु को वह प्रचुर धन देकर मिला लेता है। उसका देना भी सम्मानपूर्वक होता है, अर्थात् धन और सम्मान दोनों के साथ साम-नीति का प्रयोग करता है किन्तु इसमें यह भी नहीं समझना चाहिए कि वह ऐरे-गैरे सभी लोगों को इस प्रकार धन सम्मान देता है बल्कि केवल गुणियों को ही, सब को नहीं।

पूर्ववर्ती विशेषण से परवर्ती वाक्यों की स्थापना करने के कारण एकावली अलंकार इस श्लोक में है।